1965G Bhaktamer in regional languages

Bhaktamer Bhasha Kavitt (In Sanmati Sandesh, 1965)

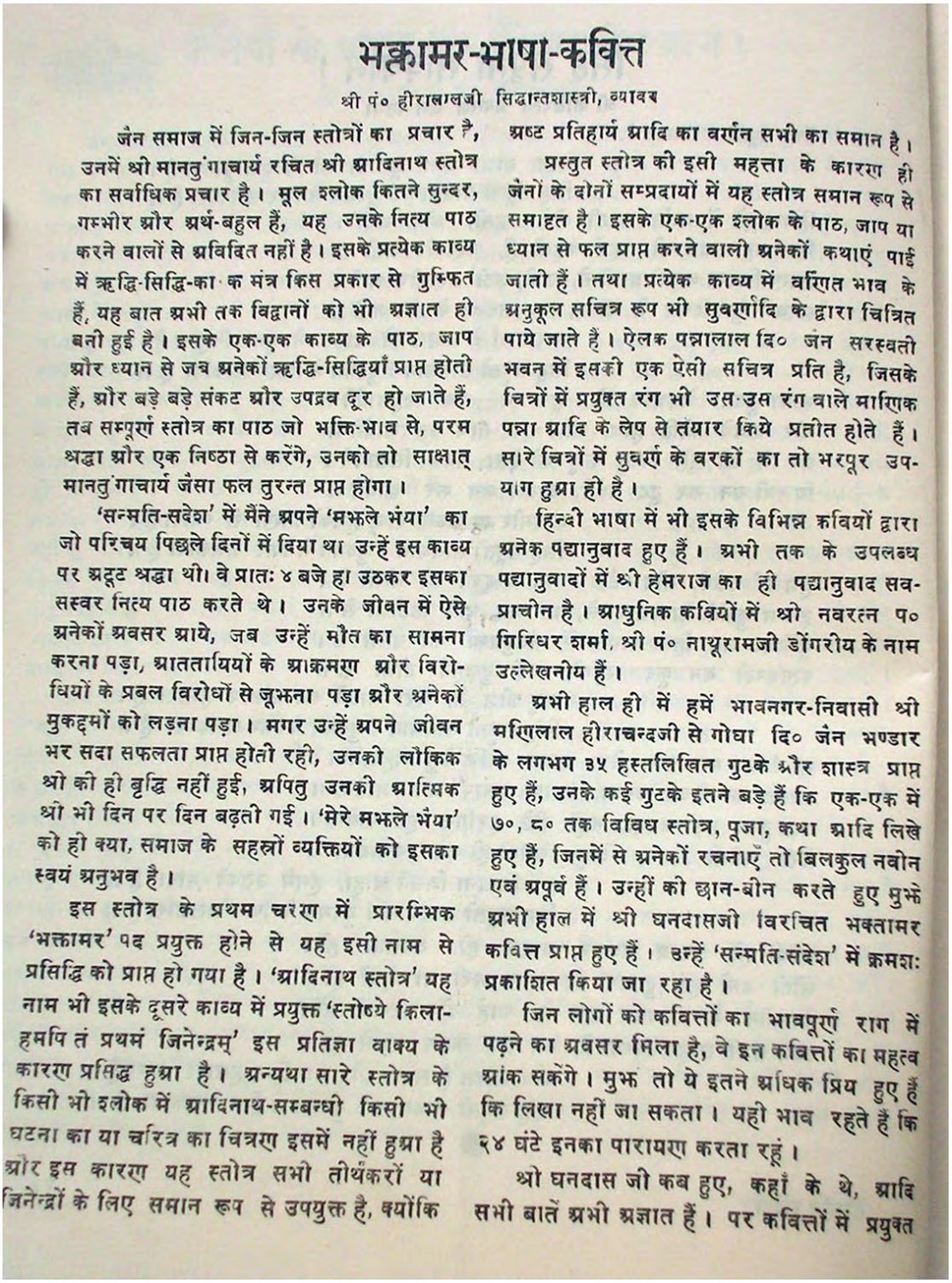

भक्तामर-भाषा-कवित्त

श्री पं० हीरालालजी सिद्धान्तशास्त्री, व्यावर

जैन समाज में जिन-जिन स्तोत्रों का प्रचार है, उनमें श्री मानतुंगाचार्य रचित श्री आदिनाथ स्तोत्र का सर्वाधिक प्रचार है। मूल श्लोक कितने सुन्दर, गम्भीर और अर्थ-बहुल हैं, यह उनके नित्य पाठ करने वालों से अविदित नहीं है। इसके प्रत्येक काव्य में ऋद्धि-सिद्धि-का क मंत्र किस प्रकार से गुम्फित हैं, यह बात अभी तक विद्वानों को भी अज्ञात ही बनी हुई है। इसके एक-एक काव्य के पाठ, जाप और ध्यान से जब अनेकों ऋद्धि-सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं, और बड़े बड़े संकट और उपद्रव दूर हो जाते हैं, तब सम्पूर्ण स्तोत्र का पाठ जो भक्ति-भाव से, परम श्रद्धा और एक निष्ठा से करेंगे, उनको तो साक्षात् मानतुंगाचार्य जैसा फल तुरन्त प्राप्त होगा।

'सन्मति-सदेश' में मैंने अपने 'मझले भंया' का जो परिचय पिछले दिनों में दिया था उन्हें इस काव्य पर अटूट श्रद्धा थी। वे प्रातः ४ बजे ही उठकर इसका सस्वर नित्य पाठ करते थे। उनके जीवन में ऐसे अनेकों अवसर आये, जब उन्हें मौत का सामना करना पड़ा, आततायियों के आक्रमण और विरोधियों के प्रबल विरोधों से जूझना पड़ा और अनेकों मुकद्दमों को लड़ना पड़ा। मगर उन्हें अपने जीवन भर सदा सफलता प्राप्त होती रही, उनकी लौकिक श्री की ही बृद्धि नहीं हुई, अपितु उनकी आत्मिक श्री भी दिन पर दिन बढ़ती गई। 'मेरे मझले भैया' को ही क्या, समाज के सहस्रों व्यक्तियों को इसका स्वयं अनुभव है।

इस स्तोत्र के प्रथम चरण में प्रारम्भिक 'भक्तामर' पद प्रयुक्त होने से यह इसी नाम से प्रसिद्धि को प्राप्त हो गया है। 'आदिनाथ स्तोत्र' यह नाम भी इसके दूसरे काव्य में प्रयुक्त 'स्तोष्ये किलाहमपि तं प्रथमं जिनेन्द्रम्' इस प्रतिज्ञा वाक्य के कारण प्रसिद्ध हुआ है। अन्यथा सारे स्तोत्र के किसी भी श्लोक में आदिनाथ-सम्बन्धी किसी भी घटना का या चरित्र का चित्रण इसमें नहीं हुआ है और इस कारण यह स्तोत्र सभी तीर्थंकरों या जिनेन्द्रों के लिए समान रूप से उपयुक्त है, क्योंकि अष्ट प्रतिहार्य आदि का वर्णन सभी का समान है।

प्रस्तुत स्तोत्र की इसी महत्ता के कारण ही जैनों के दोनों सम्प्रदायों में यह स्तोत्र समान रूप से समादृत है। इसके एक-एक श्लोक के पाठ, जाप या ध्यान से फल प्राप्त करने वाली अनेकों कथाएं पाई जाती हैं। तथा प्रत्येक काव्य में वर्णित भाव के अनुकूल सचित्र रूप भी सुवर्णादि के द्वारा चित्रित पाये जाते हैं। ऐलक पन्नालाल दि० जैन सरस्वती भवन में इसकी एक ऐसी सचित्र प्रति है, जिसके चित्रों में प्रयुक्त रंग भी उस-उस रंग वाले माणिक पन्ना आदि के लेप से तयार किये प्रतीत होते हैं। सारे चित्रों में सुवर्ण के वरकों का तो भरपूर उपयोग हुआ ही है।

हिन्दी भाषा में भी इसके विभिन्न कवियों द्वारा अनेक पद्यानुवाद हुए हैं। अभी तक के उपलब्ध पद्यानुवादों में श्री हेमराज का ही पद्यानुवाद सवप्राचीन है। आधुनिक कवियों में श्री नवरत्न प० गिरिधर शर्मा, श्री पं० नाथूरामजी डोंगरीय के नाम उल्लेखनीय हैं।

अभी हाल ही में हमें भावनगर-निवासी श्री मणिलाल हीराचन्दजी से गोघा दि० जैन भण्डार के लगभग ३५ हस्तलिखित गुटके और शास्त्र प्राप्त हुए हैं, उनके कई गुटके इतने बड़े हैं कि एक-एक में ७०, ८० तक विविध स्तोत्र, पूजा, कथा आदि लिखे हुए हैं, जिनमें से अनेकों रचनाएँ तो बिलकुल नवीन एवं अपूर्व हैं। उन्हीं को छान-बीन करते हुए मुझे अभी हाल में श्री घनदासजी विरचित भक्तामर कवित्त प्राप्त हुए हैं। उन्हें 'सन्मति-संदेश' में क्रमशः प्रकाशित किया जा रहा है।

जिन लोगों को कवित्तों का भावपूर्ण राग में पढ़ने का अवसर मिला है, वे इन कवित्तों का महत्व आंक सकेंगे। मुझ तो ये इतने अधिक प्रिय हुए हैं कि लिखा नहीं जा सकता। यही भाव रहते हैं कि २४ घंटे इनका पारायण करता रहूं।

श्री घनदास जी कब हुए, कहाँ के थे, आदि सभी बातें अभी अज्ञात हैं। पर कवित्तों में प्रयुक्त

पदों से वे बुन्देलखंडो और श्री बनारसीदास जी के समकालिक प्रतीत होते हैं। कवित्त छन्द बड़ा ही लोकप्रिय रहा है, इसलिए श्री घनदास जी ने भक्तामर का कवित्तों में ही अनुवाद करना उचित समझा। उनको कवित्त बनाने की शक्ति अपूर्व प्रतीत होती है। कवित्त छंद बड़ा होता है, इसलिए प्रायः प्रत्येक श्लोक का भाव पल्लवित करते हुए श्री घनदास जी ने इन कवित्तों की रचना की है।

अभी इन कवित्तों के सम्बन्ध में अधिक न कह कर उन्हें पहले पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करना ही उचित है। पूरे काव्यों के प्रकाशित हो जाने पर इनके विषय में अधिक प्रकाश डाला जायेगा।

१

मो पै एक रसना कै रचना न कही परै ऐसे जिनवरजू के भगत अमर है,
जिनके मुकुट शीस राजत रतनमय कंचन-जटित महाशोभा अतिवर है।
तेई जब लटकहि प्रभु के चरन पर आभा नखनि में व्यापी मानों दिनकर है,
'घनुदास' वेई जिन चरण तू हृदय धरि सदा ही उद्योतकारी पाप-तम-हर है॥

२

प्रथन जिनेन्द्र आदिनाथ की स्तुति आपु वाङ्मय करे और काही आवई,
सुरलोक हू के नाथ, नरलोक हू के नाथ, नागलोक हू के नाथ नीके ताहि गावई।
अवर जितने भव्य त्रिभुवन मध्य वसें तिनके हरति मनहू कों भलै भावई,
'घनुदास' देखौ ताहि संस्तुतिकरण कहै लागी बाई सोधौ पारु कैसे करि पावई॥

३

बुद्धिको विहूनौ सब गुनिन को हीनो नाथ, ऐसो सठु चाहै तेरी संस्तुति कहनको,
कबहू तो बुधकी संगति करी नहीं नेक ऐसो हो विमल ज्ञान चाहतु लहन को।
राकापति-आभा जल-मांहि को प्रकासु देखै दालक कै मनु शशि को तु जो गहन को,
इतनी सकति 'घनराज' में कहां तें भई, प्रभु की भगति उर अन्तर रहन को॥

४

तुम्हारे गुणानुवाद अनंत अनाथ बन्धु नर कै सकति कैसें होत कछु कोवे की।
सुरनि को गुरू आपु संस्तुति जदपि करै, तदपि बाही पै होइ पूजा पद छोवेकी।
अंबुनिधि कल्पान्त-काल के पवन कैसें मनुष्य कैं भुज-बल होइ पारु लोवे की,
'घनुदास' वराकु विचारो सब गुन न्यारो ताकै को भगति मति होइ धोंउ दीवे की॥

५

हों तो सब सठनि को राउ, हों अनाथ-बंधु, तिहरी भक्ति मोपै संस्तुति करावे जू,
हों तो अति निपट अयानों ताहि जानै जगु तिहारो यों प्रीति रसनें सिखावे जू।
नांही कछु मेरे गुण एक हू अखिर केरे तेरेऊ प्रताप नाथ, तुंही मुख गावे जू,
'घनुदास' कहूँ मृगराज के सामुहै मृगी सुत के सनेह जीव जुद्ध कह आवै जू॥

६

अल्प श्रुती होइ अति वेद की न जानें गति मेरी मति हांसी बुध-मंदिर ठटति है,
आपु ही जु स्तुति आई उर कछु उपजाई मेरो गुन मेटि सब आपु ही रटति है।
जैसें कल कोकिला की माधवी वसंत रितु अंबको कलिका कफी स्वयमेव फटति है,
'घनुदास' वह गुन कोकिला न तेरै कछु प्रभु को परम प्रीति आई निबटति है॥

(क्रमशः)